International Journal of Early Childhood Special Education (INT-JECSE)
DOI: 10.48047/intjecse/v14i4.451 ISSN: 1308-5581 Vol 14, Issue 04 2022

संतोष गोयल की कहानियों में धार्मिक चेतना

Monika Dalal,
research Scholar, Deptt. of Hindi, Baba Mastnath University, Rohtak.
Dr. Jai Karan Yadav,
Professor Department of Hindi, Baba Mastnath University, Rohtak.

सांराश

संतोष गोयल की कहानियों में समाज में धर्म के स्वरूप का वास्तविक चित्र प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है कि हमारे समाज में धर्म के नाम पर अनेक अंधविश्वास और कुरीतियां प्रचलित है, जिनसे भारतीय समाज को खोखला कर दिया है। संतोष गोयल भारतीय समाज में प्रचलित ऐसे अंधविश्वासों और कुरीतियों से चिंतित हैं। वह एक संवेदनशील साहित्यकार है और अपने कथा साहित्य में अनेक पात्रों के माध्यम से धार्मिक पाखण्डों के प्रति विरोध व्यक्त करती हैं।

संतोष गोयल के कथा साहित्य में धार्मिक चेतना से संबंधित परिस्थितियों तथा क्रियाकलापों के प्रति सुक्ष्मता से यथार्थता को व्यक्त रते हुए समाज को सचेत करने का प्रयास किया गया है। इन्होंने भारत में प्रचलित धार्मिक मान्यताओं के साथ–साथ कुरीतियों को भी वर्णित करते हुए सत्यता से अभिव्यक्त किया है। गोयल जी के साहित्य में मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण की प्रधानता रही है? परन्तु समाज को कोई भी क्षेत्र इनकी लेखनी से अछूता नहीं है। इन्होंने कुरीतियों और रूढ़ियों पर करारा व्यंग्य करते हुए पात्रों के माध्यम से विद्रोह को व्यक्त किया है। समाज में धर्म के बदलते स्वरूप का यथार्थ चित्रण करते हुए परिस्थितियों और परिवेश को वर्णित करने का प्रयास किया है।

मुख्य शब्द : ***चेतना, धार्मिक, सृजन, परिवेश, परिस्थितियाँ।***

प्रस्तावना

सन्तोष गोयल एक सुप्रसिद्ध साहित्यकार है, इन्होंने अपने कथा साहित्य में मानव मन के अंतर्द्वन्द्व को केंद्र में रखा है। इनके कथा साहित्य समाज के प्रत्येक पहलू को छुकर लिखा गया है। साहित्यकार अपने युग की परिस्थितियों और परिवेश से प्रभावित होकर कल्पना का समावेश करते हुए साहित्य सृजन करता है। गोयल जी भी ऐसी ही साहित्यकार हैं, जो वर्तमान युग की परिस्थितियों और परिवेश का अनुभव करते हुए उन्हें यथार्थ स्वरूप में समाज के समक्ष वर्णित करती हैं। इनके कथा साहित्य में मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण सर्वाधिक मिलता है। परन्तु आर्थिक, राजनीतिक, धार्मिक और सांस्कृतिक क्षेत्र भी अछूता नहीं है। इन्होंने प्रत्येक पक्ष को ध्यान में रखते हुए साहित्य का सृजन किया है। समाज के यथार्थ चित्र को अपने साहित्य के माध्यम से उद्घाटित किया है और समाज में व्याप्त समस्याओं के प्रति जागरूकता लाने का प्रयास करती नजर आती हैं। साहित्य समाज का दर्पण होता है और साहित्यकार इसके माध्यम से धर्म, संस्कृति और विघाटित होते मूल्यों को पुनः स्थापित करने का प्रयास करता है। धर्म हमेशा समाज का रक्षक रहा है, परन्तु आज इसका ह्रास हो रहा है और यही कारण है कि साहित्यकार समाज में धार्मिक चेतना का स्वरूप वर्णित करता है। भारत में धर्म का विशेष महत्त्व है और जन्म से लेकर मृत्यु तक हिंदू समाज धार्मिक सस्कारों से जुड़ा हुआ है। यह समाज को नियंत्रित करते है। इसकी कोई निश्चित परिभाषा नहीं है, परन्तु फिर भी इसे परिभाषित करते हुए विभिन्न विद्वानों ने अपने–अपने विचार रखे हैं। हिंदी शब्द सागर के अनुसार– "धर्म शब्द 'धृ' धातु से बना है जिसका अर्थ है – धारण करना"।[1] इस प्रकार जो धारण करने योग्य होता है, उसे धर्म कहते हैं।

मैकाइबर के अनुसार, "धर्म जैसा कि हम समझते आए हैं, से केवल मनुष्य के बीच का सम्बन्ध ही नहीं, एक उच्चतर शक्ति के प्रति मानव का सम्बन्ध भी सूचित होता है।"[2] इस प्रकार धर्म मानव मन का सम्बन्ध न होकर शक्ति का संचार है, जो मनुष्य को सही दिशा की ओर अग्रसर करता है।

दुर्खिज के अनुसार, "धर्म पवित्र वस्तुओं से संबंधित विश्वासों और आचरणों की वह समस्त व्यवस्था है, जो इन पर विश्वास करने वालों को एक नैतिक समुदाय में संयुक्त करती है।"[3] इस प्रकार धर्म मनुष्य को नैतिक आचरण का बोध करवाता है। मानव मन को पवित्रता से जोड़कर उसमें अन्दर की बुराई को समाप्त करता है।

चेतना का अर्थ बोध होता है और समाज में मनुष्य सर्वाधिक चिन्तनशील प्राणी है। मानव और चेतना एक ही सिक्के के दो पहलू हैं और दोनों का घनिष्ठ सम्बन्ध है। चेतना मानव मन की वह शक्ति है जिससे वह परिस्थितियों और परिवेश को अनुभव करता है। चेतना के अभाव में मानव जीवन अस्तित्वहीन होता है क्योंकि इसी में मानसिक शक्ति जागृत होती है। मानव को क्रियाशील बनाकर इसका विकास करती है। चेतना का स्वरूप अत्यन्त व्यापक और परिवर्तनशील है। डॉ0 देवराज पथिक चेतना को परिभाषित करते हुए लिखते है – "चेतना अनुभवकर्ता द्वारा सांसारिक वस्तुओं का यथातथ्य अवलोकन ही नहीं अपितु उनकी परख और मूल्यांकन भी है।"[4]इससे ज्ञात होता है कि चेतना से मानव मन का मूल्यांकन और अवलोकन भी होता है। मनुष्य अपने अनुभवों को परख कर सीखता है और जीवन में विकास की ओर अग्रसर होता है।

गजानन माधव मुक्तिबोध के अनुसार – "चेतना के तत्त्व बाह्य के आत्मसात कृत बिंब हैं। उनका आधार बाह्यमत हैं किंतु उनकी अग्नि और तेज आत्मगत है।"[5] इससे ज्ञात होता है कि चेतन बाह्य जगत से उत्पन्न होकर मानव

मन में ग्रहण की जाती है। चेतना मानव जीवन की शक्ति है, जिससे वह दिव्यत्व को प्राप्त करता है। चेतना का विकसित रूप साहित्यकार के साहित्य में प्रकट होता है। धर्म और चेतना को समझने के पश्चात् संतोष गोयल के कथा साहित्य में धार्मिक चेतना का स्वरूप क्या है। इसे गोयल जी ने अत्यन्त प्रभावी ढंग से व्यक्त किया है। वर्तमान युग में धर्म को सम्प्रदाय या मजहब के पर्याय के रूप में देखा जाता है। दूसरे के चलते धर्म का स्वरूप परिवर्तित हो रहा है। समाज में धर्म का विशेष महत्त्व है तथा प्रत्येक व्यक्ति धर्म में विश्वास रखता है। साहित्यकार के साहित्य में धर्म का यथार्थ रूप उद्घाटित होता है। रचनाकार प्रेम, सौंदर्य के साथ–साथ धर्म और संस्कृति को भी अपनी रचनाओं में स्थान देता है। संतोष गोयल का कथा साहित्य वर्तमान परिवेश से प्रभावित है। आज धर्म को व्यवसाय बना कर उसका व्यापार किया जा रहा है। इनके साहित्य में परम्परागत धर्म, आडम्बर, मूर्ति पूजा आदि का वर्णन भी देखने को मिलता है। इनकी कहानियों में पात्र धार्मिक आडम्बरों का विरोध करते हुए प्रतीत होते हैं। इन्होंने अपने साहित्य में परम्परागत धर्म की अपेक्षा अपने कर्त्तव्यों को पूरा करना ही धार्मिक स्वरूप स्वीकार किया है। इनकी कहानी 'बोध' की नायिका अनुभव करती है उनके माता–पिता बाह्य आडम्बरों और कर्मकाण्डों में लिप्त होकर धर्म के वास्तविक स्वरूप से कहीं दूर होते जा रहे हैं। वे अपने कर्त्तव्यों से विमुख होकर जीवन यापन करते हैं। नायिका इन धार्मिक आडम्बरों को स्वीकार नहीं कर पाती और विद्रोह करते हुए कहती है "मैं नियति मानकर मन को समझा नहीं पाती थी। माँ जब–जब धर्म–कर्म की बातें करती, मेरा मन बहस करने को करता नीति की चर्चा पर कटु आलोचना मन नही मन चलती रहती। माँ के पास आई स्त्रियों को दीदी श्रद्धा भाव से भरकर देखती, पर मैं उन्हें माँ को घर से विमुख करने वाला मानकर माफ नहीं कर पाती। विशेषतया, जब सभी मानव, महाभारत, गीता के बारे में गलत–सलत बातें कर अपना ज्ञान बधारती, तब तो मेरा मन भीतर से सुलग उठता, कभी–कभी तो वो माँ दुनिया के प्रति कितनी विरक्त है, गृहस्थी में रहकर कीचड़ में कमल की तरह वैरागिन है। इस प्रकार माँ का गुणगान करते तब मुझे माँ एक मुजरिम से कम नहीं लगती। क्यों माँ अपनी गृहस्थी और बच्चों की कीमत पर यह सब ढोंग (यह सब मुझे ढोंग लगता था) करती है।"[6] यहाँ पर धर्म की कर्त्तव्यों से विमुख करते हुए दर्शाया गया है और युवावर्ग के विद्रोह को उद्घाटित किया गया है। इनकी कहानियों में मनुष्य को कर्मकांड की अपेक्षा कर्मवीरता की ओर ले जाने का प्रयास किया गया है। मनुष्य का वास्तविक धर्म कर्म करना होता है और उसे इसका ज्ञान होना चाहिए। मनुष्य मंदिर–मस्जिद में जाकर पूजा करें, चढ़ावा चढ़ावे में केवल आडम्बर है, धर्म नहीं हैं। गोयल जी की कहानियों में इसका विराधि किया गया है।

परिवार के प्रति अपने कर्त्तव्यों का निर्वहन करते हुए समाज एवं राष्ट्र के विकास में योगदान करना वास्तविक धर्म होता है। 'कितने–कितने सैलाब' कहानी में धर्म और पाखण्ड के यथार्थ सत्य को उद्घाटित करने का प्रयास किया गया है। तुलसिया अपने पति की असमय मृत्यु को सहन नहीं कर पाती ओर सदमें में चली जाती है जिसका कारण उसका नवजात शिशु भी सम्भाल न होने के कारण मृत्यु का ग्रास बन जाता है। यह घटनाएँ परिस्थितिवश घटित होती हैं, परंतु उसके ससुराल वाले और आस पड़ोस वाले लोग उसे डायन बना देते हैं क्योंकि वह अपने पति और बच्चे की मृत्यु पर रोती नहीं। लोग कहते हैं – "तुलसिया डायन ..... डायनों का कोई घर–बार नहीं होता। उनसे लोग डरते हैं। डायन तो सारा का सारा मोहल्ला खा जाती है। फिर भी उनका पेट नहीं भरता। ओझा के सामने पड़ी तुलसिया न रोई न चीखी न किसी को पुकारा ओझा पंडित हैरान– परेशान। पता नहीं गोत (गाँव) पर क्या कहर है? जिसका क्रोध बरपा हो रहा है? कौन सा ग्रह ऊँट की टेढी चाल चल रहा था? कौन दुरात्मा सुन्दर रूप धारण करके गोट में उतर आई है? सोच–विचार की बैठकों के बाद तुलसिया को मनसा देवी के मंदिर में ले जाया गया। पिछले पच्चीस दिन की भूखी–प्यासी तुलसिया जो जिंदा होकर भी मरे के समान थी, मनसा देवी की चढ़ाई के बीच में दम तोड़ गई। इस तरह एक डायन की कहानी खत्म हो गई।"[7] यहाँ धर्मांधता एवं अंधविश्वास का यथार्थ स्वरूप दशोया गया है। समाज में वर्तमान युग में भी लोग आडम्बरों और अंधविश्वास को मानकर एक औरत की मानसिक दशा को समझने की अपेक्षा उसका शोषण करने में लगा हुआ है। गोयल जी की कहानियों में समाज की रूढ़िवादी मनःस्थिति को दर्शाने का प्रयास किया गया है। समाज में परम्पराओं और रूढ़िवादी विचारधारा के कारण स्त्री की स्थिति अत्यन्त गम्भीर हो गई है। लेखिका ने स्त्री शोषण को आर्थिक आडम्बर के माध्यम से उद्घाटित किया है। वर्तमान युग में भी धार्मिक अंधविश्वास के कारण अनेक स्त्रियों को भेंट चढ़ना पड़ता है। आज की वैज्ञानिक प्रगति के युग में भी मनुष्य ईश्वरीय सत्ता शैतान एवं डायन जैसी मान्यताओं पर विश्वास करता है। इसी अन्धविश्वास के कारण लोग स्वार्थ सिद्ध करने में लगे हुए हैं। तुलसिया की स्थिति को देखकर परिवार और समाज में से किसी का भी मन नही पसीजता इसके विपरीत उसे डायन करार दे दिया जाता है। लेखिका ने निरन्तर अभिशाप बनते जा रहे अंधविश्वास को अपनी कहानियों के माध्यम से उठाकर समाज को सचेत करने का प्रयास किया है। यहाँ उन्होंने अंधविश्वास के साथ–साथ वैधव्य जीवन की समस्या को भी उठाया है। समाज में पति के पश्चात् विधवा का जीवन आज भी नरकीय है। उसकी मनोदशा को जाने बिना उसे डायन बनाकर अन्धविश्वास की भेंट चढ़ा देना समाज की मानसिकता को दर्शाता है। समाज में अपने साहित्य के माध्यम से समस्याओं को उजागर करते हुए जागरूकता लाने का प्रयास करती हैं। लेखिका अपनी संवदेन शक्ति से धार्मिक चेतना को आधार बनाकर समाज में फैली कुरीतियों को उजागर किया है। इन्होंने प्रत्येक घटना को समझकर उसके पीछे छिपे कारणों को उजागर करते हुए समाधान भी दर्शाया है।

'संतोष गोयल की कहानी 'अंगार' में सौन्या अपनी अम्मा और दादी की सोच को लेकर काफी दुखी रहती है। वह घर में होने वाले भेदभाव को उद्घाटित करते हुए लिखती है कि "और अम लोगों की जिंदगी ..... जानते है, न आप सभी .. .. महीने में होने पर हम किस तरह अछूत बनाकर बाहर बैठा दिए जाते है। ... सारे घर को पता चलता है..... कितना ओंछा महसूस होता है खुद को, आप लोग क्या जाने? हमारे लिए कुछ भी हमारा अपना नहीं.....दूसरों की ओर ताकतें और उस

हिसाब के चलते रहने को मजबूर..... यही भी कोई जीना है।" यहाँ समाज में औरत के मासिक धर्म के समय होने वाले शोषण के सत्य को वर्णित किया गया है। परिवार में इन दिनों में स्त्री के साथ जो असमानता का व्यवहार किया जाता है, इससे स्त्री अपने–आप को अछूत महसूस करती है। वह अपने प्रति होने वाले व्यवहार से दुखी होकर स्वयं को ही धिक्कारती प्रतीत होती है।

सन्दर्भ सूची

1. श्याम सुन्दर दास, हिंदी शब्द सागर (भाग–1), वाराणसी, नागरी प्रचारिणी सभा, 1968, पृ0 1682
2. डी0 आर0 विद्या सचदेव, समाजशास्त्रीय सिद्धान्त, इलाहाबाद, किताब महल, 1999, पृ0 629
3. वही, पृ0 630
4. डॉ0 देवराज पथिक, नई कविता में राष्ट्रीय चेतना, कादम्बरी प्रकाशन, नई दिल्ली, 1985, पृ0 21
5. गजानन माधव मुक्तिबोध, मुक्तिबोध रचनावली, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, 2007, पृ0 215
6. संतोष गोयल, बोध (कहानी), सीढ़ियाँ तथा अन्य कहानियाँ, हिंदी बुक सेंटर, दिल्ली, 1998 पृ0 59
7. संतोष गोयल, कितने–कितने सैलाब (कहानी), पृ0 78
8. संतोष गोयल, अंगार (कहानी) अंगार तथा अन्य कहानियाँ, अमन प्रकाशन, दिल्ली 2013, पृ0 87–88